The Research Dialogue

An Online Quarterly Multi-Disciplinary
Peer-Reviewed / Refereed Research Journal
ISSN: 2583-438X
Volume-2, Issue-2, July-2023
www.theresearchdialogue.com

भारतीय ज्ञान परम्परा एवं पाठ्य वस्तु का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

गणेश शुक्ल
(शोध छात्र)
शैक्षिक अध्ययन विभाग, शिक्षा संकाय
महात्मा गाँधी केन्द्रीय विश्विद्यालय पूर्वी चंपारण, बिहार

प्रो० आशीष श्रीवास्तव
(संकायाध्यक्ष)
शैक्षिक अध्ययन विभाग,शिक्षा संकाय
महात्मा गाँधी केन्द्रीय विश्विद्यालय पूर्वी चंपारण, बिहार

सारांश –

किसी भी देश की ज्ञान परम्परा उस देश के जीवन को गति देती है, समाज एवं राष्ट्र के चरित्र का निर्माण करती है| यही जीवन प्रणाली का आधार होती है ,तथा मानव जीवन को उन्नति के शिखर तक पहूँचाती है| राज्य की शासन व्यवस्था की तत्परता क्रियाशीलता सक्षमता तथा उत्तरदायित्वों के भावना को जन्म देने के लिए ज्ञान ही आगे बढाती है | प्रायः किसी भी राष्ट्र के जीवन को समुन्नत करने के लिए ज्ञान ही आधार माने गए है | वस्तुत किसी सभ्यता का अध्ययन करना है तो उसकी शुरुवात उसकी ज्ञान परम्परा से करनी चाहिए | यह देश एक अद्भुत शिक्षा परम्परा का अनुयायी रहा है| यह वह भूमि है जहां आधुनिक विज्ञान कम से कम दो हजार वर्ष पूर्व भारतीय वैज्ञानिकों ने पृथ्वी द्वारा अपनी धुरी पर चक्कर लगाये जाने और रात दिन होने के कारण का ज्ञान प्राप्त कर लिया था | प्राचीन भारत में चन्द्रमा और सूर्य की गतियों का बहुत सूक्ष्म अध्ययन कर लिया था | इस शोध पत्र में भारतीय शिक्षा परम्परा के उन महतवपूर्ण घटकों को देखने का प्रयास किया गया जो एक समृद्ध परम्परा की घोतक थी, इस शोध पत्र के विवेचना से स्पष्ट है की प्राचीन भारत में शिक्षा केवल आध्यात्मिक विज्ञानं तक सीमित नही थे , उसका क्षेत्र व्यापक था , अपनी उत्तम शिक्षा व्यवस्था के कारन ही प्राचीन काल में भारत भौतिक विज्ञानों , कलाओं एव औद्योगिक क्षेत्र में विश्व का अग्रणीय माना जाता था | अपनी शिक्षा परंपरा के बलबूते ही यह देश विश्वगुरु के पद पर आसीन था |

मुख्य बिंदु – ज्ञान परम्परा , पाठ्यवस्तु , ज्ञान प्रक्रिया |

भारतीय ज्ञान परम्परा का मुख्य आधार चेतना का प्रसार करना है, जबकि पश्चिमी दर्शन में सैधांतिक प्रयोजन की प्रमुखता है वह स्वतंत्र चिंतन पर आधारित है और आत्म प्रमाण की उपेक्षा करता है नीति और धर्म की व्यवहारिक बातों से प्रेरणा नही लेता, इसके विपरीत भारतीय ज्ञान परम्परा आध्यात्मिक चिंताओं से प्रेरणा पाता है, भारतीय दर्शन सत्ता के स्वरुप की जो छानबीन करता है उसके पीछे उद्देश्य मानव जीवन के चरम साध्य मोक्ष्य को प्राप्त करता है | भारतीय दर्शन तत्त्वतः आध्यात्मिक है, भारत में ज्ञान और धर्म परस्पर आश्रित माने गए है, यहाँ धर्म कट्टर विश्वासों का घर नही है बल्कि एक सजीव अनुभव है | विश्व के प्राचीन सभ्यताओं में भारत का नाम प्रमुखता से आता है लगभग 5000 वर्ष पूर्व से भारतीय सभ्यता अपने गर्भ में अनेक दर्शनों व्यवस्थाओं मान्यताओं एवं लम्बे मानव इतिहास को सजोये है| भारतीय ज्ञान परम्परा का सबसे बड़ा गुण यह है कि उसमे अपने आपको कायम करने की शक्ति अनादि काल से विद्यमान है | भारतीय ज्ञान परम्परा के विषय में चर्चा के पूर्व सर्वप्रथम जान लेना आवश्यक होगा कि ज्ञान क्या है ? यह प्रश्न उतना ही प्राचीन और दुरूह है जितना की स्वयं मानव सभ्यता भारतीय एवं पाश्चात्य दार्शनिकों ने ज्ञान शब्द का प्रयोग कई अर्थो में किया | सामान्यतः ज्ञान का प्रयोग समझ के अर्थ में किया जाता है यह समझ का अर्थ जानने की प्रक्रिया से है गौतम जैसे नैयायिको ने ज्ञान का प्रयोग संज्ञान के अर्थ में किया है , यहा संज्ञान का अर्थ प्रतीति से है | कुछ नैयायिकों के अनुसार ज्ञान समस्त व्यवहारों का हेतु है | इस दृष्टि से विचार किया जाय तो ज्ञान एक उपलब्धि है , भाष्य मीमांसको के अनुसार ज्ञान आत्मा का धर्म है | भारतीय परम्परा में ज्ञान को प्रकाश माना गया है | यह आत्मा को विषयी तथा ज्ञात वस्तुओं को विषय के रूप में व्यक्त करता है| प्रत्येक विषय ज्ञान में आत्म ज्ञान निहित होता है इससे स्पष्ट है कि भारतीय दार्शनिकों ने ज्ञान पद का प्रयोग अनेक अर्थो में किया| किसी भी सभ्यता में उसकी संस्कृति एवं आवश्यकता के अनुसार कुछ मान्यताये निर्धारित किये जाते है जो सामाजिक संचरण एवं मानवीय विकास के ध्येय से प्रेरित होते है | इसके लिए हमे वैदिक काल के समाज एवं उसके मान्यताओं के आधार पर यज्ञ परम्परा, लेखन शैली का विकास एवं भाषागत विकास, सामाजिक वर्गीकरण आदि की भूमिका महत्वपूर्ण बन जाती है| भारत में राष्ट्रीय संस्कृति का स्वभाव हजार वर्षो से एक जैसा है यह जीवन दृष्टि के कारणों से है\ भारतीय जन सबसे अधिक इस धरती को महत्त्व देता है दुनिया के किसी अन्य संस्कृति में भूखण्ड को इतना मूल्यवान मानने की परम्परा नही रही| किसी भी सभ्यता में उसकी स्थिति, संस्कृति, एवं आवश्यकता के अनुसार कुछ नियम बनाये जाते है जो सामाजिक संचरण एवं मानवीय विकास के ध्येय से प्रेरित होते है| भारतीय चिंतन के अनुसार मनुष्य की मूल प्रकृति आध्यात्मिक है इसी कारण मनुष्य के गहरे आध्यात्मिक स्तर पर परम सत्य की जिज्ञासा है जिससे प्रेरित होकर मानव वैज्ञानिक अनुसन्धान करता है और सत्य के अनवरत खोज में संलग्न है | मनुष्य की इस अध्यात्मिक प्रकृति के कारण ही उसमे कला संस्कृति सदाचार और धर्म के रूप में अपने

को अभिव्यक्त किया | समस्त ज्ञान मनुष्य के अन्दर में होता है स्वामी विवेकानन्द कहते है कि मनुष्य की अंतर्निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति करना ही शिक्षा है , अर्थात कोई भी ज्ञान बाहर से नही आता है सब अन्दर ही है | अतः समस्त ज्ञान वह भौतिक एव आध्यात्मिक दोनों हो सकता है , मनुष्य के आत्मा में है | भगवान् बुद्ध कहते है व्यक्ति जब जन्म लेता है तो उसपर अज्ञानता का एक लेप लगा होता है| बहुधा वह प्रकाशित न होकर ढका रहता है और जब वह लेप धीरे धीरे हटता है तो हम कहते है कि हम सीख रहे है | जब व्यक्तियों में यह अज्ञानता का लेप हटता जाता है वह अन्य व्यक्तियों के अपेक्षा अधिक ज्ञानी है | भारतीय परम्परा में शिक्षा का लक्ष्य नये सिरे से कुछ निर्माण करना नही है उसे तो मनुष्य में पहले से ही सुप्त शक्तियों का अनावरण और उनका विकास करना है |

भारतीय परम्परा में ज्ञान प्रक्रिया –

प्रत्यक्ष ज्ञान –

प्रत्यक्ष प्रमाण भारतीय दर्शन में स्वीकृत समस्त प्रमाणों में प्रत्यक्ष प्रमाण का सर्वप्रमुख स्थान है| **प्रति विषय प्रति गत्तम अक्षम इंद्रिय यस्मै प्रयोजनाय तत प्रत्यक्षम** प्रत्यक्ष शब्द इंद्रियाजन्य ज्ञान का बोधक होता है| क्योंकि उसी ज्ञानात्मक प्रयोजन को संपन्न करने के लिए इंद्रिय विषय के प्रति गमन करता है चार्वाक दर्शन में केवल प्रत्यक्ष को एकमात्र प्रमाण माना है| बृहस्पति सूत्र में स्पष्ट कहा गया है **प्रत्यक्षमेवेक प्रमाणम** अर्थात प्रत्यक्ष ही एकमात्र प्रमाण है| इसके पीछे चार्वाकों का तर्क है कि जिस प्रमाण के द्वारा यथार्थ निश्चित और असंदिग्ध ज्ञान की प्राप्ति संभव हो केवल वही प्रमाण माना जा सकता है| जैन दर्शन में स्वीकृत प्रत्यक्ष की धारणा दर्शनों की प्रत्यक्ष की अवधारणा से भिन्न है, लगभग सभी दर्शनों में इन्द्रिय प्रत्यक्ष को ही प्रमाण कहा गया किंतु जैन में आत्म सापेक्ष ज्ञान को प्रत्यक्ष कहा गया| कांट ने भी कहा है कि इंद्रियों के द्वारा ज्ञान की सामग्री प्राप्त होती है और बुद्धि उन्हें आत्मज्ञान का रूप देती है| न्याय दर्शन के अनुसार जब इन्द्रिया क्रियाशील होकर अपने अपने विषय को ग्रहण करती हैं| और उसके अनंतर जो ज्ञान प्राप्त होता है उसे प्रत्यक्ष कहते हैं| कुमारिल भट्ट के अनुसार ज्ञानेंद्रियों का वास्तविक रूप में विद्यमान विषयों के साथ संबंध होने से ज्ञान उत्पन्न होता है, वह प्रत्यक्ष है| ज्ञान्नेद्रियों के विषय संनिकर्ष के आधार पर उत्पन्न अन्तः करण की वृत्ति स्वरुप अध्यवसाय को प्रत्यक्ष ज्ञान कहते है | इन्द्रियों द्वारा बाह्य विषयों से चित्त(अन्तःकरण) सम्बन्धित होकर विषयाकार हो जाता है | चेतन पुरुष (आत्मा) का प्रकाश चित्त पर पड़ता है | चेतन से प्रकाशित चित्त अपनी प्रविित्तियों द्वारा विषय को प्रकाशित करता है | विषय का प्रकाशित होना ही उस विषय का ज्ञान कहलाता है |

अनुमान ज्ञान –

अनुमान का शाब्दिक अर्थ हुआ पीछे होने वाला ज्ञान अर्थात एक बात जानने के उपरांत दूसरी बात का ज्ञान ही अनुमान हुआ | प्रातःकाल उठने पर मिट्टी गीली होने पर रात्रि के वर्षा का अनुमान होता है | इस प्रकार के अनुमान से उत्पन्न ज्ञान

को यथार्थ ज्ञान माना जाता है | वास्तव में अनुमान प्रत्यक्ष ज्ञान के कारण ही संभव है | अनुमान ज्ञान मुख्यतः बौद्धिक तर्क पर आधारित होता है | सम्पूर्ण भारतीय दर्शन में ज्ञान की प्राप्ति के साधनों में जितना व्यापक व् गहन चिन्तन अनुमान प्रमाण के बारे में किया गया है उतना अन्य प्रमाण के बारे में नहीं | अनुमान के सम्बन्ध में वैशेषिक, न्याय मीमांषा और जैन सम्प्रदाओं ने प्राथमिक रूप से तथा सांख्य योग तथा वेदांत सम्प्रदाओं ने गौण रूप में चिन्तन किया है | जयंत भट्ट के अनुसार पक्षसत्व इत्यादि पांच लक्षणों से युक्त लिंग के ज्ञान से व्याप्ति समरण के द्वारा परोक्ष साध्य विषयक ज्ञान अनुमिति है और उसके कारण को अनुमान कहा जाता है | जैसे धुंआ को देखकर आग का अनुमान | योग्य भाष्य में कहा गया है कि अनुमान करने योग्य वस्तु का समान जातियों से पृथक करने वाला जो सम्बन्ध है तदविषयक सामान्य रूप निश्चय करने वाली प्रधानवृत्ति को अनुमान कहते है | अद्वैत वेदांत में अनुमान का सामान्य और विशेष दोनों लक्षण दिया गया है| सामान्य लक्षण के अनुसार अनुमिति का कारण अनुमान है '**अनुमितिकरणमनुमानम**' और विशेष लक्षण के अनुसार ज्ञप्ति ज्ञानत्व धर्म से अविछिन्न व्यक्ति ज्ञान द्वारा उत्पन्न होने वाला ज्ञान अनुमिति है | '**अनुमितिश्च व्याप्तिज्ञाननत्वेन व्याप्तिज्ञानजन्या**' | अकलक के अनुसार साधन द्वारा साध्य का ज्ञान होना ही अनुमान है|

उपमान ज्ञान –

सामान्य उपमिति के कारण से उपमान प्रमाण कहते है | उपमिति सदृश्य ज्ञान सादृश्य है | उपमान उप और मान शब्दों के योग से बना है | उप का अर्थ सादृश्य का ज्ञान जिस साधकतम कारण से होता है उसे उपमान प्रमाण कहते है | उपमान नैयायिकों के अनुसार यथार्थ ज्ञान का तीसरा प्रमाण है | वैशेषिक दर्शन के प्रणेता कणाद तथा उनके अनुयायियों ने इसे स्वतंत्र प्रमाण के रूप में स्वीकार नही किया | किन्तु नब्य न्याय के उदय होने पर जब न्याय वैशेषिक के सिद्धांतों का समन्वय स्थापित किया गया, तब से उस परम्परा में भी इस प्रमाण को माना जाने लगा| न्याय दर्शन के अनुसार उपमान वह प्रमाण है जिसमे सादृश्य का बोध कराने वाले वाक्य का स्मरण करके सादृश्य वस्तु का ज्ञान होता है | न्याय सूत्र में कहा गया है कि प्रसिद्ध वस्तु जैसे गाय के साधमर्य से अप्रसिद्ध वस्तु जैसे गवय के ज्ञान को उपमिति और उसके साधन को उपमान कहते है | **'प्रसिद्दसाधमर्यात साध्यसाधनमुपमनाम'** | वात्सायन ने कहा है कि ज्ञान वस्तु के साध्य के आधार पर ज्ञायनीय वस्तु का ज्ञान करने वाला साधन उपमान है| उदाहरणार्थ जिस प्रकार की गौ होती है उसी प्रकार का गवय होता है इस कथन से गवय का ज्ञान कराने वाला जो साधन है वह उपमान प्रमाण कहलाता हैं| आचार्य गौतम ने उपमान का लक्षण इस प्रकार किया है कि प्रसिद्द वस्तु के साधमर्य से साध्य की सिद्धि करने वाला उपमान प्रमाण होता है | बौद्ध और सांख्य दर्शन में उपमान का अंतर्भाव प्रत्क्षय में किया है |इस लिए इन दर्शनों में उपमान को पृथक प्रमाण नही माना गया है | इनके अनुसार उपमान का फल सदृश्य प्रतीति प्रत्क्षय प्रमाण से भी हो सकती है |

शब्द ज्ञान –

सम्पूर्ण भारतीय दार्शनिक वांगमय में चार्वाक बौद्ध और वैशेषिक दर्शन के अतिरिक्त अन्य सभी दर्शनों में शब्द का पृथक प्रामान्य स्वीकार किया गया है | व्युत्पत्ति परक दृष्टि से शब्द ध्वनी शब्द् यति होता है | जिन विषयों का ज्ञान प्रत्यक्ष तथा अनुमान के द्वारा प्राप्त नहीं हो सकता उनके यथार्थ ज्ञान को प्राप्त करने के लिए हमें शब्द प्रमाण का सहारा लेना पड़ता है कोई ऐसा व्यक्ति हो जिसने उस विषय का प्रत्यक्ष अथवा अनुमान से ज्ञान प्राप्त कर लिया है उसके द्वारा उपदेश सुनकर अथवा लिपिबद्ध है तो पढ़कर उस विषय का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है इसी शब्द से अर्थ का विषय करने वाली चित्त की वृत्ति को शब्द से प्राप्त ज्ञान कहते हैं| यहां यह बात महत्वपूर्ण है कि कोई विशेष सुनने से अथवा पढ़ने मात्र से हमारे ज्ञान का अंग नहीं बनता है वही विषय हमारे ज्ञान का अंग बनता है जिसके अर्थ का हमें बोध होता है| न्याय दर्शन में शब्द का विवेचन चतुर्थ प्रमाण के रूप में किया गया है | न्यायसूत्रकार के अनुसार आप्तोपदेश ही शब्द है | सभी व्यक्तियों के के उपदेश शब्द प्रमाण नही माने जाते है | अन्नभट्ट के तर्क संग्रह में लिखा है **आप्तस्तु यथार्थ वक्ता** अर्थात यथार्थ वक्ता ही आप्त पुरुष है| इस प्रकार प्राचीन नैयायिको ने आप्त के उपदेश को शब्दप्रणाम माना| महर्षि कपिल के अनुसार आप्तोपदेश शब्द है लेकिन आप्त का अर्थ है आप्ति से युक्त और आप्ति का अर्थ योग्यता | अर्थात यक्ति जब अपने अनुभव के अनुसार किसी पदार्थ के वास्तविक स्वरूप का वर्णन करता है तो उस समय के उसके कथन को शब्द प्रमाण कहते है|

एकाग्रता –

भारतीय ज्ञान परम्परा में मन कि एकाग्रता को सम्पूर्ण शिक्षा का सार माना गया है| एकाग्रता कि शक्ति जीतनी अधिक होगी ज्ञान की प्राप्ति उतनी अधिक होगी| मन में सदैव संकल्प एवं विकल्प पानी कि लहरों के समान उत्पन्न होते रहते है, यह सर्व विदित है कि मन या चित अति चंचल होता है | निरंतर बाह्य विषयों में प्रवित्त होता रहता है | मन कि इस विखरी हुयी शक्ति से कोई कार्य सम्पादित नही होता है | प्राचीन भारतीय दार्शनिकों ने चित्तवृत्ति निरोध को शिक्षा का लक्ष्य माना | वास्तव में चित्त ही शिक्षा का वाहन है| राज योग में धारणा ध्यान एव समाधी एकाग्रता के ही क्रमिक स्तर है | पतंजलि योग सूत्र में चित्त कि पांच अवस्था मानी गयी है मूढ़,क्षिप्त,विक्षिप, एकाग्र और निरुद्ध | मूढ़ वस्था में मनुष्य निंद्रा, तन्द्रा, मोह, भय, आलस्य, क्रोध आदि के वशीभूत होकर विवेक शून्य होने के कारण उचित अनुचित का विचार नही कर पाता | मनोविज्ञान के दृष्टि से अधिकांश छात्र इसी अवस्था में मिलते है , एकाग्रता में चित्त विशुद्ध सत्वरूप होता है | इस स्थिति को प्राप्त व्यक्ति सत्य का द्रष्टा बन जाता है, परन्तु दुर्भाग्य यह है कि आधुनिक मनोविज्ञान मन की इस अवस्था से अनिभिज्ञ है | योगाभ्यास से प्राप्त एकाग्रता की शक्ति ही ज्ञान के कोष कि कुंजी है |

ब्रह्मचर्य –

प्राचीन भारतीय शिक्षा के पद्दति के मूल में एक सबसे महत्त्वपूर्ण वस्तु ब्रह्मचर्य का अभ्यास था| भारतीय चिन्तन के अनुसार जीवन एव प्राण शक्ति का मूल श्रोत भौतिक नही अध्यात्मिक है, किन्तु जिस आधारशिला पर जीवन शक्ति क्रियाशील होती है वह भौतिक है | भारतीय चिंतन के अनुसार शक्ति कि मुलभुत इकाई रेतस है | मनुष्य के अन्तः स्थित इस रेतस में समस्त उर्जा विद्यमान है | यह शक्ति या तो स्थूल भौतिक रूप में देखी जा सकती है या सुरक्षित रखी जा सकती है समस्त मनोविकार भोग अच्छा कामना इस शक्ति को स्थूल रूप में या सुसुप्ता रूप में शरीर से बाहर फेंक कर नष्ट कर देते हैं अनैतिक आचरण उसे स्थूल रूप में बाहर सकता है अनैतिक विचार उसे सुषमा रुप में ब्रम्हचर्य जैसे शारीरिक होता है वैसे ही मानसिक और वाचिक भी । समस्त आत्मसंयम रेतस में निहित ऊर्जा की रक्षा करता है, और रक्षा के साथ सदा वृद्धि होती रहती है भारतीय सिद्धांत के अनुसार रितेश जल तत्व है जो प्रकाश ऊष्मा और विद्युत से परिपूर्ण है रेतस का संचय सर्वप्रथम उस माया तमस में परिवर्तित होता है जो सारे शरीर को प्रदीप्त करता है इसी कारण आत्म संयम के सभी रूप तपस्या कहलाते हैं। भारतीय शिक्षा का मूल आधार ब्रह्मचर्य पालन है जो प्रत्येक विद्यार्थी के लिए परिहार प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति के अनुसार तो विद्या अध्ययन काल के ब्रह्मचर्य आश्रम कहलाता था| ब्रह्मचारी के मस्तिष्क में प्रबल कार्य शक्ति और अमोघ इच्छा शक्ति रहती है| पवितत्य के बिना आध्यात्मिक शक्ति नहीं आ सकती | ज्ञान बौद्धिक प्रक्रिया है राग द्वेष काम क्रोध अहंकार आदि मन के विकारों से बुद्धि आच्छादित हो जाती है अर्थात ज्ञान शक्ति का नाश हो जाता है। ज्ञान की प्रक्रिया की सफलता हेतु मन को इन विचारों से बचाए रखना परम आवश्यक है इसलिए प्राचीन भारतीय शिक्षा में ब्रम्हचर्य कोई प्राचीन रूढ नहीं है यह संयम और साधना का सनातन मंत्र है | ब्रम्हचर्य का ढोंग और ब्रह्मचर्य दोनों में बहुत भेद है गीता में श्रीकृष्ण ने कहा है कि जो मूल बुद्धि पुरुष कर्मेंद्रियों को हठ से रोक कर इंद्रियों के लोगों का मन से चिंतन करता रहता है वह मुख्य कार्यक्रम भी कहलाता है अतः ब्रह्मचर्य पालन के लिए मन का नियंत्रण आवश्यक है वास्तव में ब्रह्मचर्य पालन शारीरिक की अपेक्षा मानसिक अधिक है नियंत्रण के अंग है | अतः आधुनिक शिक्षा जगत के लिए यह विचारणीय विषय आज ब्रह्मचर्य के अभाव के कारण ही हमारे देश की तरुणाई निस्तेज और दिव्य शक्ति नष्टप्राय सी हो रही| छात्र तेज एवं ब्रह्म तेज से ओतप्रोत भारत की युवा शक्ति जागृत होगी तभी तेजस्वी भारत का निर्माण होगा जो विश्व का आध्यात्मिक दिशा निर्देशन करने में समर्थ होगा।

संस्कार सिद्धांत –

भारतीय मनीषियों ने मानव के अवचेतन मन के क्षेत्र का ज्ञान अति प्राचीन काल में प्राप्त कर लिया था| जिसका पूर्ण ज्ञान पाश्चात्य मनोविज्ञान को अभी तक प्राप्त नहीं है, मनुष्य की समस्त क्रियाओं विचारों तथा उद्द्वेगों

आदि का कारण उसकी अवचेतन अवस्थाएं हैं| भारतीय मनोविज्ञान के अनुसार इस अवचेतन को बनाने वाले घटक संस्कार हैं जिन्हें अवचेतन मनोविज्ञान संसेचन काम प्रस्तुति अवशेष आज बातों से जानता है भारतीय मनोविज्ञान के अनुसार संस्कार सिद्धांत शिक्षा का मूल आधार है संस्कारों के आधार पर ही शिक्षा के द्वारा बालक का शारीरिक मानसिक बौद्धिक नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास होता है | अधिगम की संपूर्ण क्रिया संस्कार सिद्धांत पर ही आधारित है, आधुनिक मनोविज्ञान में चूहा और कुत्तों पर प्रयोग करके अधिगम के विभिन्न सिद्धांत निर्धारित किए भारतीय मनोविज्ञान में अधिगम के समस्त सिद्धांत संस्कार सिद्धांतों के आधार पर सहस्रों वर्ष पूर्व सफलतापूर्वक प्रयुक्त किए जा चुके हैं आधुनिक शिक्षा प्रणाली में संस्कार सिद्धांतों की घोर उपेक्षा की जा रही है, परिणाम शिक्षा निष्फल हो रही है अतः शिक्षा का आधार संस्कार सिद्धांत को बनाने की आवश्यकता है| भारतीय समाज में 16 संस्कारों की परंपरा मानव प्रकृति के सांस्कृतिक उन्नयन की प्रक्रिया ही थी, उधर संस्कारों से शून्य शिक्षा नई पीढ़ियों को मनुस्विता बना रही है अतः आज गंभीर चिंतन करने की एवं वर्तमान स्थिति में सुधार लाने हेतु उपाय करने की आवश्यकता है|

प्राचीन भारतीय शिक्षा में पाठ्यवस्तु –

वेद की शिक्षा –

वैदिक काल में छात्रों के पाठ्य विषय केवल वेद मंत्रों के उच्चारण एवं उन्हें कंठस्थ करने तक सीमित नहीं थे| यास्क के अनुसार वेद के विद्यार्थियों को व्याकरण की पूरी जानकारी आवश्यक थी| विद्वानों के अनुसार वेद के अध्ययन के साथ ही वेदांग अर्थात शिक्षा ,कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छंद ,ज्योतिष इन छह विषयों के अध्ययन भी प्रचलित थे| उत्तर वैदिक काल में वैदिक विद्यालय के पाठ विषय बहुत विस्तृत हो गए थे | चार वेदों से संबंधित विशाल साहित्य का प्रादुर्भाव हो गया था इसका प्रमाण छांदोग्य उपनिषद में वर्णित नारद सनत कुमार संवाद में मिलता है, किसी प्रसंग में नारद कहते हैं मैं चारों वेद जानता हूं इसके अतिरिक्त इतिहास पुराण भी जानता हूं व्याकरण आज वेदांग श्राद्धकल्प, राशि ,देव विद्या, निधि शास्त्र, वाको वाक्य गायन, देव विद्या, ब्रह्मविद्या भूत विद्या, क्षण विद्या, नक्षत्र विद्या, सर्व विद्या ,धन विद्या भी मैं जानता हूं| उपनिषद साहित्य में परा विद्या अर्थात परम विद्या को ही सब विद्याओं में श्रेष्ठ कहा गया अन्य विद्याओं का अपरा विद्या तथा अविद्या कहा गया है| इसवी पूर्व ४०० वर्ष में महान वैयाकरण पाणिनि कि **अष्टाध्यायी** चार हजार सूत्रों से संस्कृत भाषा से पूर्णतः आबद्ध कर चुकी थी | उसी कालखंड में पतंजलि का महाभाष्य आविर्भूत हुआ जिसने व्याकरण साहित्य के लिए कुछ भी नही छोड़ा | ४७६ इसवी में पाटिलपुत्र के आर्यभट्ट ने ज्योतिशास्त्र को संगठित करके एक वैज्ञानिक स्वरुप प्रदान कर चुके | अंको का ज्ञान विश्व को भारत से ही मिला | सुत्रकाल में औषधि विज्ञान की भी अभूत पूर्व प्रगति हुयी सुश्रुत को भी इसी कालखंड का माना जाता है इस काल में

दर्शन साहित्य का भी पूर्ण विकास हुआ | कौटिल्य का अर्थशास्त्र इस बात का प्रमाण है कि सूत्र काल में विशेषीकृत शिक्षा प्रतिष्ठित थी, भरद्वाज, पराशर, कात्यायन, आदि विद्वानों का उल्लेख भी कौटिल्य ने किया है | उच्च शिक्षा साहित्य एव वैज्ञानिक दो भागो में बिभक्त थी जिसके आधार स्तम्भ वेद हुआ करते थे, विनय तथा अन्य बौद्ध साहित्य में औषध विज्ञानं का प्रचुर मात्र में विवरण मिलता है , इससे यह सिद्ध होता है ईसा से पांच सौ पूर्व भारत में औषध विज्ञान पुर्णतः विकसित थे , भारतीय चिकित्सक न केवल औषधि शास्त्र में पारंगत थे, अपितु शल्य विद्या में पूर्ण अभ्यस्त थे , विनय में जीवक नामक एक चिकित्सक का वृस्त्रित विवरण मिलाता है | जीवक ने तक्षशिला में ही इस विषय की शिक्षा पायी थी |

व्यासायिक शिक्षा –

प्राचीन भारत की उच्च शिक्षा प्रधानता अध्यात्मिक ज्ञान से संबंधित रही है, किंतु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि औद्योगिक एवं व्यवसायिक शिक्षा से इसका कोई मेल नहीं था| वास्तव में इन विषयों की शिक्षा की सुव्यवस्था भारतीय प्राचीन परम्परा में आरंभ से ही विद्यमान थी, अन्यथा भारतीय समाज को वह औधोगिक निपुणता तथा आर्थिक संपन्नता प्राप्त न होती जिसके लिए वह शताब्दियों तक विश्व में प्रसिद्ध रहा |प्राचीन भारत न केवल देशवासियों की औद्यौगिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता था अपितु यहां के औद्योगिक उत्पाद विश्व के अधिकांश देशों को भेजे जाते थे | फाहियान अपने विवरण में जहाजों का जिक्र करते हुए लिखता है कि जिस जहाज में उसने दक्षिण पूर्व के देशों की ओर यात्रा की थी उसमें 600 यात्री थे ,व्यापारिक समृद्धि के कारण औद्योगिक गृह कारखानों में अनेक प्रकार की उपयोगी वस्तुएं तैयार होने लगी थी, रेशमी, ऊनि, तथा मल मल आदि महीन भारतीय वस्तुओं के मांग सर्व सुदूर थी| इसके अतिरिक्त अस्त्र-शस्त्र कारपोजी, सुगन्धितद्रव्य,हाथी दांत ,सोना तथा रत्न भारतीय वाणिज्य व्यवसाय की सुप्रसिद्ध वस्तुएं थी, साथ ही साथ मिट्टी के बर्तन बहुत पक्के एवं आकर्षण होते थे|

चिकित्सा शास्त्र (आयुर्वेद) की शिक्षा –

प्राचीन भारतीय शिक्षा परम्परा में चिकित्सा शास्त्र कि शिक्षा बहुत ही उत्तम उत्कृष्ट एवं उन्नत अवस्था में थी| इस शिक्षा का उल्लेख जातकों (बौद्ध साहित्य) में बहुत विस्तार से किया गया है | उस समय तक्षशिला चिकित्सा शास्त्र के अध्ययन का विश्व में स्थान रखने वाला संस्थान था | देश विदेश के छात्र चिकित्सा शास्त्र के अध्ययन के लिए तक्षशिला आते थे, भारतीय इतिहास में चरक और सुश्रुत का अभिर्भाव चिकित्सा विज्ञान के इतिहास में मील का पत्थर है | **'चरक संहिता' 'सुश्रुत संहिता'** दोनों भारतीय ग्रन्थ वैश्विक मानव समाज के लिए अद्वतीय देंन है | इन दोनों ग्रंथों में व्याधियों की उत्पत्ति , उनके लक्षण , उनकी पहचान ,औषध निर्धारण आदि

सभी विषयों पर विस्तृत विवेचना है | शल्य विद्या (सर्जरी) के संपूर्ण अंगों तथा रीतियों का विवरण सुश्रुत संहिता में दिया गया है छोटे-छोटे घाव फुंसियों से लेकर हाथ पैर काटना पेट चीरना आदि तक की पूर्ण विधि एवं शल्य यंत्रों का विवेचन किया गया है| सुश्रुत के अनुसार शल्य विद्या के विद्यार्थियों के लिए मृत शरीर के विश्लेषण के द्वारा शरीर के विभिन्न तथा सुक्ष्मतम अंगों का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है| देश भर में लगभग प्रत्येक ग्राम में स्थानीय वैद्य हुआ करते थे,आज भी बनवासी जैसे पिछड़े क्षेत्रों में जड़ी बूटियों के जानकार लोग पाए जाते हैं जो असाध्य रोगों का उपचार भी उनके द्वारा कर देते हैं| यह विद्या परिवार के अन्य सदस्य को सिखा कर स्थानीय वैद्ध इसे अभी तक जीवित रखे हुए है| ये वैद्ध इस विद्या का अर्थ उपार्जन के लिए उपयोग ना कर एक धार्मिक कर्तव्य के रूप में इस का निर्वहन करते थे|

पशु चिकित्सा की शिक्षा –

प्राचीन भारतीय शिक्षा परम्परा में मनुष्य कि चिकित्सा के साथ साथ पशु चिकित्साशास्त्र कि भी व्यवस्था थी, ई. वी. पूर्व तीसरी शती में पशु चिकित्सा के लिए अनेक चिकित्सालय भी खुले हुए थे| नकुल और सहदेव पशु चिकित्सा में दक्ष थे | जैन और बौद्ध धर्म के अभिर्भाव से पशु चिकित्सा के विकास में प्रेरणा मिली | कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र में इस बात पर प्रमुख प्रकाश डाला है कि सेना विभाग के लिए हाथियों तथा घोड़ों के लिए सुयोग्य चिकित्सकों की नियुक्ति हो यह तथ्य इस बात पर प्रकाश डालता है कि राजकीय सेना अपने पशुओं के देखभाल के लिए विशेष शिक्षा का प्रबंध करती थी |

कृषि -विज्ञान एवं पशुपालन की शिक्षा –

भारतीय गुरुकुल परम्परा में कृषि विज्ञानं एवं पशुपालन की व्यवहारिक शिक्षा दी जाती थी, आश्रमों में कृषि बागवानी उसके अंग ही थे , जहा छात्र क्रिया करके अनुभव प्राप्त करते थे , उपनिषदों में अनेक स्थानों पर इनका उल्लेख मिलता है , अरुनि कि कथा इस तथ्य के लिए बेहद प्रासंगिक हो जाती है| इसी प्रकार गो सेवा कार्य आश्रम की शिक्षा का अभिन्न अंग था , बैल एवं घोड़े तो कृषि एवं आवागमन के साधन के रूप में घर घर पाले जाते थे | कृषि शिक्षा का उल्लेख तक्षशिला विश्वविद्यालय की शिक्षा में भी मिलता है|

उपसंहार-

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि प्राचीन भारत कि शिक्षा एक विशिष्ट उद्देश्य से संचालित होती थी, जिसका उद्देश्य मानव व्यक्तित्व का उच्चतम विकास करना था| वस्तुतः इस विकास के दो पक्ष थे एक अलौकिक तथा दूसरा परलौकिक , पहले का लक्ष्य मानव जीवन के समस्त भौतिक सम्बन्धों के सम्यक ज्ञान तथा व्यवहार से था , दुसरे का लक्ष्य परम ज्ञान की उपलब्धि था| जिसके द्वारा मनुष्य अपने वैयक्तिक अस्तित्व को पारमार्थिक अखिल विश्व सत्ता

में अंतर्भूत कर दे | भारत कि प्राचीन ज्ञान परम्परा इन्ही मूल उद्देश्यों की पूर्ति कि दृष्टि से सचेष्ट थी, जिसमे मनुष्य एक सफल एवं सुखमय जीवन व्यतीत करता हुआ जीवन मरण से मुक्ति प्राप्त कर ले |

संदर्भ-

- पाण्डेय, राम सकल (2012). भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास आगरा : श्री विनोद पुस्तक मंदिर |
- शर्मा, आर .के. (2005) . डेवलपमेंट आफ एडुकेशन सिस्टम इन इण्डिया आगरा : राधा प्रकाशन मन्दिर |
- शर्मा, आर .ए .(2005). डेवलपमेंट आफ एडुकेशन सिस्टम इन इण्डिया मेरठ : सूर्या पब्लिकेशन|
- तोमर, लज्जा राम (2018). प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति नई दिल्ली : सुरुचि प्रकाशन |
- मजुमदार , एन.एन. (1916). हिस्ट्री आफ एडुकेशन इन एंसियेंट इंडिया, कलकत्ता : प्रिंटेड बाई ज्योतिष चन्द्र घोष एट द कोटन प्रेस, 57 हरिसन रोड | https://indianculture.gov.in/rarebooks/history-education-ancient-india
- नेहरू, जवाहर लाल. (2003) , ग्लिम्प्सेस आफ वर्ड हिस्ट्री, दिल्ली : जवाहर लाल नेहरु मेमोरियल फण्ड, त्री मूर्ति हॉउस . SBN 195613236 .
- कौटिलीय अर्थशास्त्र –
- रामायण
- महाभारत
- उपाध्याय, हरिशंकर. (2008). ज्ञानमीमांसा के मूल प्रश्न दिल्ली : पेंनमैन पब्लिशर्स 101 भारत नगर (गुरूद्वारे के पास) |
- शर्मा, चंद्रधर (2009). भारतीय दर्शन आलोचन और अनुशीलन दिल्ली : मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स प्राईवेट लिमिटेड |
- सिन्हा, जदुनाथ (2007). भारतीय दर्शन दिल्ली : : मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स प्राईवेट लिमिटेड |
- गुप्ता, एस.पी. &गुप्ता, अलका (2019). भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्यायें इलाहबाद : शारदा पुस्तक भवन पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स यूनिवर्सिटी रोड |

THE RESEARCH DIALOGUE

An Online Quarterly Multi-Disciplinary
Peer-Reviewed / Refereed Research Journal
ISSN: 2583-438X
Volume-2, Issue-2, July-2023
www.theresearchdialogue.com
Certificate Number July-2023/10

Certificate Of Publication

This Certificate is proudly presented to

गणेश शुक्ल एवं प्रो० आशीष श्रीवास्तव

for publication of research paper title

भारतीय ज्ञान परम्परा एवं पाठ्य वस्तु का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

Published in 'The Research Dialogue' Peer-Reviewed / Refereed Research Journal and E-ISSN: 2583-438X, Volume-02, Issue-02, Month July, Year-2023.

Dr.Neeraj Yadav
Executive Chief Editor

Dr.Lohans Kumar Kalyani
Editor-in-chief

Note: This E-Certificate is valid with published paper and the paper must be available online at www.theresearchdialogue.com